23 मार्च, शहीद दिवस पर विशेष

भगतसिंह की जिन्दगी के आखिरी 12 घंटे

लाहौर सेन्ट्रल जेल में 23 मार्च, 1931 की शुरुआत किसी और दिन की तरह ही हुई थी। फ़र्क सिर्फ़ इतना-सा था कि सुबह-सुबह ज़ोर की आँधी आयी थी।

लेकिन जेल के क़ैदियों को थोड़ा अजीब-सा लगा जब चार बजे ही वॉर्डेन चरतसिंह ने उनसे आकर कहा कि वो अपनी-अपनी कोठरियों में चले जायें। उन्होंने कारण नहीं बताया। उनके मुंह से सिर्फ़ ये निकला कि आदेश ऊपर से है।

अभी क़ैदी सोच ही रहे थे कि माजरा क्या है, जेल का नाई बरकत हर कमरे के सामने से फुसफुसाते हुए गुज़रा कि आज रात भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव को फांसी दी जानेवाली है।

उस क्षण की निश्चिन्तता ने उनको झकझोर कर रख दिया।

▯

क़ैदियों ने बरकत से मनुहार की कि वो फांसी के बाद भगतसिंह की कोई भी चीज़ जैसे पेन, कंघा या घड़ी उन्हें लाकर दें ताकि वो अपने पोते-पोतियों को बता सकें कि कभी वो भी भगतसिंह के साथ जेल में बंद थे।

बरकत भगतसिंह की कोठरी में गया और वहाँ से उनका पेन और कंघा ले आया।

सारे क़ैदियों में होड़ लग गई कि किसका उस पर अधिकार हो। आखिर में ड्रॉ निकाला गया। अब सब क़ैदी चुप हो चले थे। उनकी निगाहें उनकी कोठरी से गुज़रने वाले रास्ते पर लगी हुई थी।

भगतसिंह और उनके साथी फाँसी पर लटकाए जाने के लिए उसी रास्ते से गुज़रने वाले थे।

▯

एक बार पहले जब भगतसिंह उसी रास्ते से ले जाए जा रहे थे तो पंजाब कांग्रेस के नेता भीमसेन सच्चर ने आवाज़ ऊँची कर उनसे पूछा था, आप और आपके साथियों ने लाहौर कॉन्सपिरेसी केस में अपना बचाव क्यों नहीं किया। भगतसिंह का जवाब था, इन्क़लाबियों को मरना ही होता है, क्योंकि उनके मरने से ही उनका अभियान मज़बूत होता है, अदालत में अपील से नहीं।

▯

वॉर्डेन चरतसिंह भगतसिंह के ख़ैरख़्वाह थे और अपनी तरफ़ से जो कुछ बन पड़ता था, उनके लिए करते थे। उनकी वजह से ही लाहौर की द्वारकादास लाइब्रेरी से भगतसिंह के लिए किताबें निकल कर जेल के अन्दर आ पाती थीं।

भगतसिंह को किताबें पढ़ने का इतना शौक़ था कि एक बार उन्होंने अपने स्कूल के साथी जयदेव कपूर को लिखा था कि वो उनके लिए कार्ल लीबनेख़ की मिलिट्रिज़्म, लेनिन की लेफ़्ट-विंग कम्युनिज़्म और अपटन सिनक्लेयर का उपन्यास द स्पाई कुलबीर के ज़रिये भिजवा दें।

▯

भगतसिंह जेल की कठिन ज़िन्दगी के आदी हो चले थे। उनकी कोठरी नंबर 14 का फ़र्श पक्का नहीं था। उस पर घास उगी हुई थी। कोठरी में बस इतनी ही जगह थी कि उनका पाँच फिट, दस इंच का शरीर बमुश्क़िल उसमें लेट पाये।

भगतसिंह को फांसी दिए जाने से दो घंटे पहले उनके वकील प्राणनाथ मेहता उनसे मिलने पहुंचे। मेहता ने बाद में लिखा कि भगतसिंह अपनी छोटी-सी कोठरी में पिंजड़े में बन्द शेर की तरह चक्कर लगा रहे थे।

उन्होंने मुस्करा कर मेहता को स्वागत किया, और पूछा कि आप मेरी किताब रिवॉल्युशनरी लेनिन लाये या नहीं? जब मेहता ने उन्हें किताब दी तो वो उसे उसी समय पढ़ने लगे मानो उनके पास अब ज़्यादा समय न बचा हो।

मेहता ने उनसे पूछा कि क्या आप देश को कोई सन्देश देना चाहेंगे? भगतसिंह ने किताब से अपना मुँह हटाये बग़ैर कहा, सिर्फ़ दो संदेश।।। साम्राज्यवाद मुर्दाबाद और इन्क़लाब ज़िन्दाबाद!

इसके बाद भगतसिंह ने मेहता से कहा कि वो पंडित नेहरु और सुभाष बोस को मेरा धन्यवाद पहुंचा दें, जिन्होंने मेरे केस में गहरी रुचि ली थी।

▯

भगतसिंह से मिलने के बाद प्राणनाथ मेहता राजगुरु से मिलने उनकी कोठरी पहुँचे।

राजगुरु के अन्तिम शब्द थे, हम लोग जल्द मिलेंगे।

सुखदेव ने मेहता को याद दिलाया कि वो उनकी मौत के बाद जेलर से वो कैरम बोर्ड ले लें जो उन्होंने उन्हें कुछ महीने पहले दिया था।

▯

प्राणनाथ मेहता के जाने के थोड़ी देर बाद जेल अधिकारियों ने तीनों क्रान्तिकारियों को बता दिया कि उनको वक़्त से 12 घंटे पहले ही फांसी दी जा रही है। अगले दिन सुबह छह बजे की बजाय उन्हें उसी शाम सात बजे फांसी पर चढ़ा दिया जायेगा।

भगतसिंह मेहता द्वारा दी गयी किताब के कुछ पन्ने ही पढ़ पाये थे। उनके मुँह से निकला, क्या आप मुझे इस किताब का एक अध्याय भी ख़त्म नहीं करने देंगे?!

▯

भगतसिंह ने जेल के मुस्लिम सफ़ाई कर्मचारी बेबे से अनुरोध किया था कि वो उनके लिए उनको फांसी दिये जाने से एक दिन पहले शाम को अपने घर से खाना लाएँ।

लेकिन बेबे भगतसिंह की ये इच्छा पूरी नहीं कर सके, क्योंकि भगतसिंह को बारह घंटे पहले फांसी देने का फ़ैसला ले लिया गया और बेबे जेल के गेट के अन्दर ही नहीं घुस पाया।

▯

थोड़ी देर बाद तीनों क्रान्तिकारियों को

फांसी की तैयारी के लिए उनकी कोठरियों से बाहर निकाला गया। भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव ने अपने हाथ जोड़े और अपना प्रिय आज़ादी गीत गाने लगे-

कभी वो दिन भी आयेगा
कि जब आज़ाद हम होंगे
ये अपनी ही ज़मीं होगी
ये अपना आसमाँ होगा!

फिर इन तीनों का एक-एक करके वज़न लिया गया। सब के वज़न बढ़ गये थे। इन सबसे कहा गया कि अपना आख़िरी स्नान करें। फिर उनको काले कपड़े पहनाये गए। लेकिन उनके चेहरे खुले रहने दिये गए। चरतसिंह ने भगतसिंह के कान में फुसफुसा कर कहा कि वाहे गुरु को याद करो। भगतसिंह बोले, पूरी ज़िन्दगी मैंने ईश्वर को याद नहीं किया। असल में मैंने कई बार ग़रीबों के क्लेश के लिए ईश्वर को कोसा भी है। अगर मैं अब उनसे माफ़ी माँगूँ तो वो कहेंगे कि इससे बड़ा डरपोक कोई नहीं है। इसका अन्त नज़दीक आ रहा है। इसलिए ये माफ़ी माँगने आया है!

▯

जैसे ही जेल की घड़ी ने 6 बजाये, क़ैदियों ने दूर से आती कुछ पदचापें सुनीं। उनके साथ भारी बूटों के ज़मीन पर पड़ने की आवाज़ें भी आ रही थीं। साथ में एक गाने का भी दबा स्वर सुनायी दे रहा था, सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।।।!

सभी को अचानक ज़ोर-ज़ोर से इन्क़लाब ज़िन्दाबाद और हिन्दुस्तान आज़ाद हो के नारे सुनायी देने लगे।

▯

फांसी का तख़्ता पुराना था लेकिन फांसी देनेवाला काफ़ी तन्दुरुस्त। फांसी देने के लिए मसीह जल्लाद को लाहौर के पास शाहदरा से बुलवाया गया था।

▯

भगतसिंह इन तीनों के बीच में खड़े थे। भगतसिंह अपनी माँ को दिया गया वो वचन पूरा करना चाहते थे कि वो फाँसी के तख़्ते से इन्क़लाब जिन्दाबाद का नारा लगायेंगे।

लाहौर ज़िला कांग्रेस के सचिव पिंडीदास सोंधी का घर लाहौर सेन्ट्रल जेल से बिल्कुल लगा हुआ था। भगतसिंह ने इतनी ज़ोर से इन्कलाब जिन्दाबाद का नारा लगाया कि उनकी आवाज़ सोंधी के घर तक सुनायी दी।

▯

भगतसिंह की आवाज़ सुनते ही जेल के दूसरे क़ैदी भी नारे लगाने लगे।

▯

भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव - तीनों युवा क्रांतिकारियों के गले में फांसी की रस्सी डाल दी गयी। उनके हाथ और पैर बाँध दिये गए। तभी जल्लाद ने पूछा, सबसे पहले कौन जायगा?

सुखदेव ने सबसे पहले फांसी पर लटकने की हामी भरी। जल्लाद ने एक-एक कर रस्सी खींची, और उनके पैरों के नीचे लगे तख़्तों को पैर मार कर हटा दिया।

काफी देर तक शव तख़्तों से लटकते रहे।

▯

अंत में शवों को नीचे उतारा गया, और वहाँ मौजूद डॉक्टरों - लेफ़्टिनेंट-कर्नल जेजे नेल्सन और लेफ़्टिनेंट-कर्नल एनएस सोधी ने उन्हें - तीनों क्रान्तिकारियों को - मृत घोषित किया।

▯

एक जेल अधिकारी पर इस फांसी का इतना असर हुआ कि जब उससे कहा गया कि वो मृतकों की पहचान करें तो उसने ऐसा करने से इनक़ार कर दिया। भावुकता दिखानेवाले - और नाफ़र्मानी करनेवाले - उन अधिकारी के साथ रिआयत नहीं बरती गयी, और उसी जगह पर उनको निलंबित कर दिया गया।

एक जूनियर अफ़सर ने फिर ये काम अंजाम दिया।

▯

पहले योजना थी कि इन सबका अन्तिम संस्कार जेल के अन्दर ही किया जायेगा, लेकिन फिर ये विचार त्यागना पड़ा जब अधिकारियों को आभास हुआ कि जेल से धुआँ उठते देख बाहर खड़ी भीड़ जेल पर हमला कर सकती है। आनन-फानन में जेल की पिछली दीवार तोड़ी गई।

उसी रास्ते से एक ट्रक जेल के अन्दर लाया गया। बहुत अपमानजनक तरीक़े से क्रान्तिकारियों के शवों को एक सामान की तरह ट्रक में डाल दिया गया।

▯

पहले तय हुआ था कि उनका अन्तिम संस्कार रावी के तट पर किया जायेगा, लेकिन रावी में पानी बहुत ही कम था, इसलिए सतलुज के किनारे शवों को जलाने का फ़ैसला लिया गया।

शहीदों के पार्थिव शरीर को फ़ीरोज़पुर के पास सतलुज के किनारे लाया गया। तब तक रात के 10 बज चुके थे। इस बीच उप पुलिस अधीक्षक कसूर सुदर्शनसिंह कसूर गाँव से एक पुजारी जगदीश अचरज को बुला लाये।

▯

अभी शवों में आग लगायी ही गई थी कि लोगों को इसके बारे में पता चल गया। जैसे ही ब्रितानी सैनिकों ने लोगों को अपनी तरफ़ आते देखा, वो शवों को वहीं छोड़ कर अपने वाहनों की तरफ़ भागे।

सारी रात गाँव के लोगों ने शवों के चारों ओर पहरा दिया।

▯

अगले दिन दोपहर के आसपास ज़िला मजिस्ट्रेट के दस्तख़त के साथ लाहौर के कई इलाक़ों में नोटिस चिपकाये गए जिसमें बताया गया कि भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु का सतलुज के किनारे हिन्दू और सिख रीति से अन्तिम संस्कार कर दिया गया।

इस ख़बर पर लोगों की कड़ी प्रतिक्रिया आई और लोगों ने कहा कि इनका अन्तिम संस्कार करना तो दूर, उन्हें पूरी तरह जलाया भी नहीं गया। ज़िला मैजिस्ट्रेट ने इसका खंडन किया लेकिन किसी ने उस पर विश्वास नहीं किया।

▯

भगतसिंह और उनके दोनों साथियों के सम्मान में लोग जुलूस में चलने लगे। शोक जुलूस नीला गुंबद से शुरु हुआ। देखते-देखते वह तीन मील लम्बा हो गया था।

पुरुषों ने विरोधस्वरूप अपनी बाहों पर काली पट्टियाँ बांध रखी थीं। महिलाओं ने काली साड़ियाँ पहन रखी थीं। लगभग सब लोगों के हाथ में काले झंडे थे।

लाहौर के मॉल से गुज़रता हुआ जुलूस अनारकली बाज़ार के बीचोंबीच रुका।

अचानक पूरी भीड़ में उस समय सन्नाटा छा गया जब घोषणा की गयी कि भगतसिंह का परिवार तीनों शहीदों के बचे हुए अवशेषों के साथ फ़ीरोज़पुर से वहाँ पहुँच गया है।

जैसे ही तीन फूलों से ढ़के ताबूतों में उनके शव वहाँ पहुंचे, भीड़ भावुक हो गयी। लोग अपने आँसू नहीं रोक पाये।

वहीं पर एक मशहूर अख़बार के सम्पादक मौलाना ज़फ़र अली ने एक नज़्म पढ़ी जिसका लब्बोलुआब था, किस तरह इन शहीदों के अधजले शवों को खुले आसमान के नीचे ज़मीन पर छोड़ दिया गया।

▯

उधर, जेल वॉर्डेन चरतसिंह सुस्त क़दमों से अपने कमरे में पहुँचे और फूट-फूट कर रोने लगे। अपने 30 साल के कॅरियर में उन्होंने सैंकड़ों फांसियाँ देखी थीं। उनकी याद में किसी ने मौत को इतनी बहादुरी से गले नहीं लगाया था जितना भगतसिंह और उनके दो कॉमरेडों ने।

▯

किसी को इस बात का अंदाज़ा नहीं था कि 16 साल बाद उनकी शहादत भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के अन्त का एक कारण साबित होगी और भारत की ज़मीन से ब्रिटिश शासन हमेशा के लिए चला जायेगा।

- रेहान फ़ज़ल प्रदीप कासनी

आलेख / युवक

आचार्य शिवपूजन सहाय की डायरी के अंश

भगत सिंह

भगत सिंह युवाओं के प्रेरणास्रोत तब भी थे और आज भी

भगत सिंह युवाओं के प्रेरणास्रोत तब भी थे और आज भी हैं। आगे भी आने वाली पीढ़ी के युवाओं को वे सदैव प्रेरित करते रहेंगे। युवकों को आह्वान करते हुये उन्होंने यह लेख युवक 'साप्ताहिक मतवाला' नामक पत्रिका के 16 मई, 1925 के अंक में बलवन्त सिंह के नाम से लिखा था। लेख की चर्चा 'मतवाला' के सम्पादकीय विभाग से जुड़े आचार्य शिवपूजन सहाय ने अपनी डायरी में किया है। उन्हीं के शब्दों में ही पढें,

सन्ध्या समय सम्मेलन भवन के रंगमंच पर देशभक्त की स्मृति में सभा हुई। ... भगतसिंह ने 'मतवाला' (कलकत्ता) में एक लेख लिखा था: **जिसको सँवार-सुधार कर मैंने छापा था और उसे पुस्तक भण्डार द्वारा प्रकाशित 'युवक साहित्य' में संग्रहीत भी मैंने ही किया था। वह लेख बलवन्त सिंह के नाम से लिखा था। क्रांतिकारी लेख प्रायः गुमनाम लिखते थे। यह रहस्य किसी को ज्ञात नहीं। वह लेख युवक-विषयक था। वह लाहौर से उन्होंने भेजा था। असली नाम की जगह 'बलवंत सिंह' ही छापने को लिखा था।**

(आचार्य शिवपूजन सहाय की डायरी के अंश, 23 मार्च, पृष्ठ 28, आलोचना-67/वर्ष 32/अक्तूबर-दिसंबर, 1983)

युवावस्था मानव-जीवन का वसन्तकाल है। उसे पाकर मनुष्य मतवाला हो जाता है। हजारों बोतल का नशा छा जाता है। विधाता की दी हुई सारी शक्तियाँ सहस्र धारा होकर फूट पड़ती हैं। मदांध मातंग की तरह निरंकुश, वर्षाकालीन शोणभद्र की तरह दुर्द्धर्ष,प्रलयकालीन प्रबल प्रभंजन की तरह प्रचण्ड, नवागत वसन्त की प्रथम मल्लिका कलिका की तरह कोमल, ज्वालामुखी की तरह उच्छृंखल और भैरवी-संगीत की तरह मधुर युवावस्था है। उज्जवल प्रभात की शोभा, स्निग्ध सन्ध्या की छटा, शरच्चन्द्रिका की माधुरी ग्रीष्म-मध्याह्न का उत्ताप और भाद्रपदी अमावस्या के अर्द्धरात्र की भीषणता युवावस्था में निहित है।

जैसे क्रांतिकारी की जेब में बमगोला, षड्यंत्री की असटी में भरा-भराया तमंचा, रण-रस-रसिक वीर के हाथ में खड्ग, वैसे ही मनुष्य की देह में युवावस्था। 16 से 25 वर्ष तक हाड़- चाम के सन्दूक में संसार-भर के हाहाकारों को समेटकर विधाता बन्द कर देता है। दस बरस तक यह झाँझरी नैया मँझधार तूफान में डगमगाती तहती है। युवावस्था देखने में तो शस्यश्यामला वसुन्धरा से भी सुन्दर है, पर इसके अन्दर भूकम्प की-सी भयंकरता भरी हुई है। इसीलिए युवावस्था में मनुष्य के लिए केवल दो ही मार्ग हैं- वह चढ़ सकता है उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर, वह गिर सकता है अधःपात के अंधेरे खन्दक में। चाहे तो त्यागी हो सकता है युवक, चाहे तो विलासी बन सकता है युवक। वह देवता बन सकता है, तो पिशाच भी बन सकता है। वही संसार को त्रस्त कर सकता है, वही संसार को अभयदान दे सकता है। संसार में युवक का ही साम्राज्य है। युवक के कीर्तिमान से संसार का इतिहास भरा पड़ा है। युवक ही रणचण्डी के ललाट की रेखा है। युवक स्वदेश की यश-दुन्दुभि का तुमुल निनाद है। युवक ही स्वदेश की विजय-वैजयंती का सुदृढ़ दण्ड है। वह महाभारत के भीष्मपर्व की पहली ललकार के समान विकराल है, प्रथम मिलन के स्फीत चुम्बन की तरह सरस है, रावण के अहंकार की तरह निर्भीक है, प्रह्लाद के सत्याग्रह की तरह दृढ़ और अटल है। अगर किसी विशाल हृदय की आवश्यकता हो, तो युवकों के हृदय टटोलो।

अगर किसी आत्मत्यागी वीर की चाह हो, तो युवकों से माँगो। रसिकता उसी के बाँटे पड़ी है। भावुकता पर उसी का सिक्का है। वह छन्द शास्त्र से अनभिज्ञ होने पर भी प्रतिभाशाली कवि है। कवि भी उसी के हृदयारविन्द का मधुप है। वह रसों की परिभाषा नहीं जानता,पर वह कविता का सच्चा मर्मज्ञ है। सृष्टि की एक विषम समस्या है युवक। ईश्वरीय रचना-कौशल का एक उत्कृष्ट नमूना है युवक। सन्ध्या समय वह नदी के तट पर घण्टों बैठा रहता है। क्षितिज की ओर बढ़ते जानेवाले रक्त-रश्मि सूर्यदेव को आकृष्ट नेत्रों से देखता रह जाता है। उस पार से आती हुई संगीत-लहरी के मन्द प्रवाह में तल्लीन हो जाता है। विचित्र है उसका जीवन। अद्भुत है उसका साहस। अमोघ है उसका उत्साह।

वह निश्चिन्त है, असावधान है। लगन लग गयी है, तो रात-भर जागना उसके बाएं हाथ का खेल है, जेठ की दुपहरी चैत की चांदनी है, सावन-भादों की झड़ी मंगलोत्सव की पुष्पवृष्टि है, श्मशान की निस्तब्धता, उद्यान का विहंग-कल कूजन है। वह इच्छा करे तो समाज और जाति को उद्बुद्ध कर दे, देश की लाली रख ले, राष्ट्र का मुखोज्ज्वल कर दे, बड़े-बड़े साम्राज्य उलट डाले। पतितों के उत्थान और संसार के उद्धारक सूत्र उसी के हाथ में हैं। वह इस विशाल विश्व रंगस्थल का सिद्धहस्त खिलाड़ी है।

अगर रक्त की भेंट चाहिए, तो सिवा युवक के कौन देगा? अगर तुम बलिदान चाहते हो, तो तुम्हें युवक की ओर देखना पड़ेगा। प्रत्येक जाति के भाग्यविधाता युवक ही तो होते हैं। एक पाश्चात्य पंडित ने ठीक ही कहा है-

It is an established truism that youngmen of today are the countrymen of tomorrow holding in their hands the high destinies of the land. They are the seeds that spring and bear fruit.

भावार्थ यह कि आज के युवक ही कल के देश के भाग्य-निर्माता हैं। वे ही भविष्य के सफलता के बीज हैं।

संसार के इतिहासों के पन्ने खोलकर देख लो, युवक के रक्त से लिखे हुए अमर सन्देश भरे पड़े हैं। संसार की क्रांतियों और परिवर्तनों के वर्णन छाँट डालो, उनमें केवल ऐसे युवक ही मिलेंगे,जिन्हें बुद्धिमानों ने 'पागल छोकड़े' अथवा 'पथभ्रष्ट' कहा है। पर जो सिड़ी हैं, वे क्या ख़ाक समझेंगे कि स्वदेशाभिमान से उन्मत्त होकर अपनी लोथों से किले की खाइयों को पाट देनेवाले जापानी युवक किस फौलाद के टुकड़े थे। सच्चा युवक तो बिना झिझक के मृत्यु का आलिंगन करता है, चौखी संगीनों के सामने छाती खोलकर डट जाता है, तोप के मुँह पर बैठकर भी मुस्कुराता ही रहता है, बेड़ियों की झनकार पर राष्ट्रीय गान गाता है और फाँसी के तख्ते पर अट्टहासपूर्वक आरूढ़ हो जाता है।फाँसी के दिन युवक का ही वजन बढ़ता है, जेल की चक्की पर युवक ही उद्बोधन मन्त्र गाता है, कालकोठरी के अन्धकार में धँसकर ही वह स्वदेश को अन्धकार के बीच से उबारता है।

शेष पेज पांच पर